प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

एकल पीठः श्री प्रशांत कुमार मिश्रा, न्यायाधीश

रिट याचिका (सिविल) क्रमांक 5225 /2011

याचिकाकर्ताः श्रीमती दुरपति बाई

विरुद्ध

उत्तरवादीगण छत्तीसगढ़ राज्य एवं अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट याचिका

उपस्थितिः

श्री अवध त्रिपाठी, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता।

श्री अजय द्विवेदी, राज्य के उप शासकीय अधिवक्ता।

श्री पारस मणि श्रीवास, उत्तरवादी क्रमांक 4 के अधिवक्ता।

निर्णय / आदेश

04.05.2012

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायर इस रिट याचिका में, याचिकाकर्ता ने महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी

अधिनियम, 2005 (जिसे आगे 'अधिनियम, 2005' कहा जाएगा) के तहत नियुक्त लोकपाल द्वारा पारित आदेश/पंचाट दिनांक 12.07.2011 (अनुलग्नक P-1) की , वैधता विधिमान्यता और औचित्यता को चुनौती दी है।

2. आक्षेपित आदेश/पंचाट के तहत, लोकपाल ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध 1000/- रुपये का अर्थदंड आरोपित करने के साथ-साथ उनके और पंचायत सचिव परदेशीलाल पटेल, रोजगार सहायिका शांति देवी कश्यप के विरुद्ध प्रथम सूचना प्रतिवेदन दर्ज करने की अनुशंसा की है, क्योंकि उन्हें कूटरचित मजदूरी पर्चियां तैयार करने; डाकघर से राशि की अवैध निकासी करने और श्रमिकों की पासबुक अपने पास रखने में संलिप्त पाया गया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. प्रकरण के तथ्य संक्षेप में यह हैं कि ग्राम तुरीगांव, तहसील नवागढ़, जिला जांजगीर-चांपा के शिकायतकर्ता पीरीत राम, चंद्रिका प्रसाद, अमेरिका बाई, सनत कुमार, राम शरण, पुनई बाई, सुलोचनी बाई ने लोकपाल के समक्ष शिकायत दर्ज कराई, जिसमें कूटरचित मस्टर रोल तैयार करने, श्रमिकों के कूटरचित हस्ताक्षर बनाकर डाकघर से राशि निकालने और इस प्रकार कूटरचित मजदूरी पर्चियां तैयार करने का आरोप लगाया गया। लोकपाल द्वारा पारित आदेश से यह भी प्रतीत होता है कि कार्यक्रम अधिकारी हजारीलाल तथ्यों के सत्यापन के लिए दिनांक 14.12.2010 को गांव गए थे। यद्यपि ग्रामीण, कार्यक्रम अधिकारी द्वारा की गई जांच के तरीके से संतुष्ट नहीं थे और इस प्रकार उन्होंने कलेक्टर और मुख्य कार्यपालन अधिकारी, जिला पंचायत के समक्ष की गई शिकायत की प्रतियों के साथ लोकपाल के समक्ष वर्तमान शिकायत दर्ज कराई। शिकायतकर्ताओं द्वारा यह भी आरोप लगाया गया है कि कई ग्रामीण जैसे बोपाली, छेदीन बाई, चंद्रशेखर और सुलोचनी बाई गांव में निवास नहीं कर रहे हैं, फिर भी उनके नाम पर कूटरचित मस्टर रोल तैयार किए गए हैं और राशि आहरित की गई है। यह भी प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता, जो ग्राम पंचायत की सरपंच हैं, और रोजगार सहायिका ने कोई

जवाब प्रस्तुत नहीं किया और जवाब केवल पंचायत सचिव द्वारा प्रस्तुत किया गया, जिन्होंने स्वीकार किया कि रोजगार सहायिका के विरुद्ध बार-बार प्राप्त शिकायतों के परिणामस्वरूप, मजदूरी पर्ची जारी करने का कार्य उन्हें सौंपा गया था। यद्यपि पंचायत सचिव के अनुसार, शिकायत झूठी है और भुगतान निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार श्रमिकों को किया गया है।

4. लोकपाल ने साक्षियों के कथन दर्ज किए हैं और उसके पश्चात आक्षेपित आदेश पारित किया है।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि जांच प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार नहीं की गई है और सुनवाई का प्रभावी अवसर प्रदान नहीं किया गया है। उन्होंने निवेदन किया कि याचिकाकर्ता को साक्षियों से प्रति-परीक्षण करने का अवसर नहीं दिया गया, अतः आक्षेपित आदेश दूषित है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि लोकपाल ने याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 03.07.2011 को प्रस्तुत दस्तावेजों पर विचार नहीं किया है और इस कारण से भी आक्षेपित आदेश स्थिर रहने योग्य नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

6. दूसरी ओर, विद्वान राज्य अधिवक्ता के साथ-साथ उत्तरवादी क्रमांक 4 के विद्वान अधिवक्ता ने रिट याचिका का विरोध किया है। उनके अनुसार, लोकपाल के समक्ष कार्यवाही संक्षिप्त प्रकृति की होती है और एक बार जब यह पाया जाता है कि सुनवाई का अवसर प्रदान किया गया है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन नहीं किया गया है। विद्वान राज्य अधिवक्ता ने अधिनियम, 2005 की धारा 27 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए केंद्र सरकार द्वारा जारी निर्देशों की एक प्रति अभिलेख पर रखी है।

7. किसी भी पक्षकार ने लोकपाल के समक्ष दायर मूल शिकायत को अभिलेख पर नहीं रखा है। अनुलग्नक पी -2 लोकपाल द्वारा दर्ज किए गए साक्षियों के कथनों की प्रति है। इसमें याचिकाकर्ता द्रोपती बाई, परदेशी लाल पटेल, शांति देवी, हरनारायण, लालू, राम पीरीत कश्यप, चंद्रिका प्रसाद

कश्यप, अमेरिका बाई, सनत कुमार कश्यप, राम शरण, पुनई बाई कश्यप और सुलोचनी कश्यप के कथन सम्मिलित हैं। अतः यह स्पष्ट है कि लोकपाल ने शिकायत के कथनों के साथ-साथ याचिकाकर्ता, पंचायत सचिव परदेशीलाल और रोजगार सहायिका शांति देवी के कथन दर्ज किए थे।

8. याचिकाकर्ता के कथनों से यह प्रतीत होता है कि उनके पति ग्राम पंचायत के उपसरपंच हैं और संपूर्ण कार्य उनके पति द्वारा पंचायत सचिव एवं रोजगार सहायिका की सहायता से संचालित किया जाता है। याचिकाकर्ता ग्राम पंचायत के किसी भी प्रकरण से पूर्णतः अनभिज्ञ हैं, यहाँ तक कि जब उन्हें मजदूरी पर्ची दिखाई गई, तो वे उस दस्तावेज़ की प्रकृति का वर्णन करने में भी समर्थ नहीं थीं। पंचायत सचिव ने स्वीकार किया है कि भुगतान उनकी उपस्थिति में नहीं किए गए थे। उनके सम्मुख कोरी मजदूरी-पर्ची और अन्य प्रति-पर्चियाँ रखी गईं, जिनमें संबंधित श्रमिक के प्राप्ति हस्ताक्षर उपलब्ध नहीं हैं, और उन्हें विभिन्न मजदूरी पर्चियों में की गई काट-छाँट और अधिलेखन भी दिखाया गया। एक ही व्यक्ति के नाम पर 3 अलग-अलग प्रकार के हस्ताक्षरों के साथ 3 मजदूरी पर्चियाँ जारी की गई हैं और अंगूठे के निशान में यह उल्लेख नहीं है कि वह किसका अंगूठा निशान लिया गया है, और किसी भी मजदूरी पर्ची में जारी करने की तिथि का उल्लेख नहीं है। अपने विस्तृत कथन में, उन्होंने विभिन्न मजदूरी पर्चियों में सभी प्रकार की अवैधताओं, अनियमितताओं, काट छांट , अधिलेखन और त्रुटियों को स्वीकार किया है। इस साक्षी ने दायित्व को रोजगार सहायिका पर डालने का प्रयास किया है, जबकि रोजगार सहायिका शांति देवी ने इस बात से इनकार किया है कि उन्होंने मस्टर रोल भरे थे। उनके अनुसार, मस्टर रोल श्रमिकों यथा चंद्रमणि, अशोक, राजकुमार, भीम और कृष्ण कुमार द्वारा भरे गए थे; और मजदूरी पर्चियाँ उनके द्वारा भरी गई थीं। उनके कथन से भी यह प्रतीत होता है कि सरपंच, पंचायत सचिव और रोजगार सहायिका के मध्य आपसी विवाद

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

था, किंतु उन्होंने भी मजदूरी पर्चियों को भरने में कारित अवैधताओं, काट छांट और त्रुटियों के बारे में स्वीकार किया है। शिकायतकर्ताओं/ग्रामवासियों के कथनों में, उन्होंने कूटरचित मजदूरी पर्चियाँ तैयार करने, और सरपंच, पंचायत सचिव तथा रोजगार सहायिका द्वारा पासबुक अपने पास रखने का आरोप लगाया है।

9. अभिलेख पर उपलब्ध पूर्वोक्त सामग्री की स्थिति में, इस न्यायालय को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन के संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए तर्क पर विचार करना आवश्यक है कि क्या साक्षियों के प्रति-परीक्षण के अधिकार से वंचित करने ने संपूर्ण प्रक्रिया को दूषित कर दिया है।

10. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 (जिसे आगे 'अधिनियम, 2005' कहा जाएगा) ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन परिवारों की आजीविका सुरक्षा बढ़ाने के लिए कम से कम 100 दिनों के रोजगार की कानूनी गारंटी प्रदान करने के लिए अधिनियमित किया गया है। अधिनियम, 2005 के उद्देश्यों और कारणों के विवरण में, विधान की निम्नलिखित मुख्य विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(1) इस विधान का उद्देश्य देश के ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन परिवारों की आजीविका सुरक्षा को बढ़ाना है, जिसके लिए प्रत्येक उस निर्धन परिवार को कम से कम सौ दिनों का गारंटीकृत मजदूरी रोजगार प्रदान किया जाएगा जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक श्रम करने के लिए स्वेच्छा से आगे आते हैं।

(ii) राज्य सरकार, राज्य के ऐसे ग्रामीण क्षेत्रों में और ऐसी अवधि के लिए जिसे केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित किया जाए, प्रत्येक निर्धन परिवार को विधान में किए गए प्रावधानों के अनुसार एक वित्तीय वर्ष में कम से कम एक सौ दिनों की अवधि के लिए अकुशल शारीरिक श्रम में गारंटीकृत मजदूरी रोजगार प्रदान करेगी।

(iii) प्रत्येक राज्य सरकार, इस विधान के प्रारंभ होने की तिथि से छह महीने के भीतर, विधान के तहत प्रस्तावित गारंटी को प्रभावी करने के लिए एक योजना तैयार करेगी।

(iv) विधान के तहत सौ दिनों का रोजगार उस मजदूरी दर पर प्रदान किया जाएगा जिसे केंद्र सरकार द्वारा इस विधान के प्रयोजन के लिए विनिर्दिष्ट किया जाएगा। जब तक केंद्र सरकार द्वारा किसी क्षेत्र के लिए मजदूरी दर विनिर्दिष्ट नहीं की जाती है, तब तक कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के तहत राज्य सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी दर को उस क्षेत्र के लिए लागू मजदूरी दर माना जाएगा।

(v) यदि किसी पात्र आवेदक को निर्धारित समय सीमा के भीतर इस विधान के प्रावधानों के अनुसार कार्य प्रदान नहीं किया जाता है, तो राज्य सरकार के लिए निर्धारित दर पर बेरोजगारी भत्ता देना अनिवार्य होगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(vi) एक केंद्रीय रोजगार गारंटी परिषद केंद्रीय स्तर पर और उन सभी राज्यों में राज्य रोजगार गारंटी परिषदें जहाँ विधान लागू किया गया है, उनके संबंधित क्षेत्रों में विधान की समीक्षा, निगरानी और प्रभावी कार्यान्वयन के लिए गठित की जाएंगी।

(vii) जिला पंचायत की स्थायी समिति, जिला कार्यक्रम समन्वयक, कार्यक्रम अधिकारियों और ग्राम पंचायतों को ग्राम पंचायत, ब्लॉक और जिला स्तर पर विधान के विभिन्न प्रावधानों के कार्यान्वयन में विशिष्ट जिम्मेदारियां सौंपी गई हैं।

(viii) केंद्र सरकार इस विधान के प्रयोजनों के लिए 'राष्ट्रीय रोजगार गारंटी कोष' नामक एक कोष की स्थापना करेगी। इसी प्रकार, राज्य सरकारें 'राज्य रोजगार गारंटी कोष' का गठन कर सकती हैं।

(ix) पारदर्शिता और दायित्व, लेखापरीक्षा , शिकायत निवारण तंत्र की स्थापना और गैर-अनुपालन के लिए शास्ति के प्रावधान भी परिकल्पित हैं।

(x) ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की न्यूनतम विशेषताओं और योजना के तहत गारंटीकृत ग्रामीण रोजगार की शर्तों और श्रमिकों की न्यूनतम पात्रताके प्रावधान किए गए हैं।

11. अधिनियम की धारा 27 केंद्र सरकार को निर्देश देने की शक्ति प्रदान करती है, जबकि अधिनियम की धारा 28 विधान के अध्यारोही प्रभाव की घोषणा करती है। सुलभ संदर्भ के लिए इन प्रावधानों को नीचे उद्धृत किया गया है:

"27. निर्देश देने की केंद्र सरकार की शक्ति—(1) केंद्र सरकार इस अधिनियम के प्रावधानों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए राज्य सरकार को ऐसे निर्देश दे सकती है जो वह आवश्यक समझे।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(2) उप-धारा (1) के प्रावधानों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, केंद्र सरकार किसी भी योजना के संबंध में इस अधिनियम के तहत दी गई निधियों के निर्गमन या अनुचित उपयोग के संबंध में किसी भी शिकायत की प्राप्ति पर, यदि प्रथम दृष्ट्या संतुष्ट है कि मामला बनता है, तो उसके द्वारा नामित किसी भी एजेंसी द्वारा की गई शिकायत की जांच करा सकती है और यदि आवश्यक हो, तो योजना को निधियों को जारी करने पर रोक लगाने का आदेश दे सकती है और उचित अवधि के भीतर इसके उचित कार्यान्वयन के लिए उचित उपचारात्मक उपाय कर सकती है।

28. अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव होना—इस अधिनियम या इसके तहत बनाई गई योजनाओं के प्रावधान प्रभावी होंगे, भले ही तत्समय प्रवृत किसी अन्य विधि में या ऐसी विधि के आधार पर प्रभावी किसी लिखत में इसके साथ असंगत कोई बात क्यों न हो:

परंतु यह कि जहाँ कोई राज्य अधिनियम विद्यमान है या ग्रामीण परिवारों को अकुशल शारीरिक श्रम के लिए रोजगार गारंटी प्रदान करने के लिए अधिनियमित

किया गया है, जो इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप है, जिसके तहत परिवारों की पात्रता कम नहीं है और रोजगार की शर्तें इस अधिनियम के तहत गारंटीकृत शर्तों से निम्नतर नहीं हैं, तो राज्य सरकार के पास अपने स्वयं के अधिनियम को लागू करने का विकल्प होगा।

परन्तु यह भी कि ऐसे मामलों में वित्तीय सहायता संबंधित राज्य सरकार को उस रीति से दी जाएगी जैसा केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित किया जाएगा, जो उस राशि से अधिक नहीं होगी जिसे राज्य इस अधिनियम के तहत प्राप्त करने का हकदार होता यदि इस अधिनियम के तहत बनाई गई योजना को लागू किया जाना होता।"

12. अधिनियम की धारा 27(1) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, केंद्र सरकार ने राज्य सरकार को दिनांक 07 सितंबर, 2009 के उक्त निर्देश/आदेश के साथ संलग्न निर्देशों के अनुसार लोकपाल का कार्यालय स्थापित करने के निर्देश जारी किए हैं। राज्य द्वारा अनुलग्नक आर -1 के रूप में दाखिल 'लोकपाल संबंधी निर्देश' इस प्रकार केंद्र सरकार द्वारा जारी एक सांविधिक निर्देश है, जिसका अधिनियम की धारा 28 के आधार पर अध्यारोही प्रभाव है। उक्त निर्देशों के कंडिका 8 में लोकपाल की शक्तियों और कर्तव्यों का उल्लेख है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ, नरेगा श्रमिकों से शिकायतें प्राप्त करने और ऐसी शिकायतों पर विचार करने तथा विधि के अनुसार उनके निपटान की सुविधा प्रदान करने; स्थल निरीक्षण करने के लिए निर्देश जारी करने; दोषी पक्षों के विरुद्ध प्रथम सूचना प्रतिवेदन दर्ज करने; शिकायत निवारण, अनुशासनात्मक और दंडात्मक कार्रवाई के निर्देश देने आदि की शक्ति शामिल है। शिकायत निवारण की प्रक्रिया विनियमन के अध्याय 4 में प्रदान की गई है। कंडिका 9 उन आधारों का उल्लेख करता है जिन पर शिकायतें दर्ज की जाएंगी और कंडिका 10 शिकायत दर्ज करने की प्रक्रिया के बारे में है। कंडिका 11 यह प्रावधान करता है कि लोकपाल के समक्ष कार्यवाही संक्षिप्त प्रकृति की होगी, जबकि कंडिका 13 लोकपाल द्वारा पंचाट और अपील के बारे में है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

13. विनियम संख्या 11 के अनुसार, "लोकपाल साक्ष्य के किसी भी विधिक नियमों से बाध्य नहीं होगा और ऐसी प्रक्रिया का पालन कर सकता है जो उसे निष्पक्ष और उचित प्रतीत हो। लोकपाल के समक्ष कार्यवाही संक्षिप्त प्रकृति की होगी।" विनियमन 13 पुनः कहता है कि लोकपाल पक्षकारों को अपना मामला प्रस्तुत करने का उचित अवसर प्रदान करने के बाद पंचाट पारित कर सकता है। वह पक्षकारों द्वारा उसके समक्ष रखे गए साक्ष्यों, सामाजिक अंकेक्षण की रिपोर्टों, यदि कोई हो, नरेगा अधिनियम और योजना के प्रावधानों तथा पद्धति, समय-समय पर राज्य सरकार या केंद्र सरकार द्वारा जारी निर्देशों और निर्देशों तथा ऐसे अन्य कारकों द्वारा निर्देशित होगा जो उसकी राय में न्याय के हित में आवश्यक हैं। यह आगे प्रावधान करता है कि उप-खंड 13(1) के तहत पारित पंचाट एक 'सकारण आदेश' होगा, जिसमें आगे यह प्रावधान है कि लोकपाल द्वारा पारित पंचाट के विरुद्ध कोई अपील नहीं होगी और वह अंतिम तथा पक्षकारों पर बाध्यकारी होगा। खंड 13(9) में आगे यह प्रावधान है कि लोकपाल के समक्ष किसी भी कार्यवाही में, यदि तथ्य अवैध परितोषण रिश्वतखोरी या दुर्विनियोग के प्रकरण का खुलासा करते हैं और लोकपाल संतुष्ट है कि मामला किसी आपराधिक न्यायालय द्वारा आगे की जांच के लिए उपयुक्त है, तो वह मामला उसके द्वारा उन व्यक्तियों के विरुद्ध आपराधिक अभियोजन की स्वीकृति देने के लिए सक्षम प्राधिकारी को संदर्भित किया जाएगा। सक्षम प्राधिकारी ऐसे प्रकरण की प्राप्ति पर प्रकरण को विधि के अनुसार आगे की कार्रवाई के लिए उचित प्राधिकारी को अग्रेषित करेगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

14. नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन से संबंधित मुद्दा, विशेष रूप से याचिकाकर्ता को प्रति-परीक्षण का अवसर प्रदान करने में प्राधिकारी की विफलता के संबंध में, अधिनियम/निर्देशों के प्रावधानों और इस संबंध में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि को ध्यान में रखते हुए विचार किया जाना है। 'भारतीय

प्रतिस्पर्धा आयोग बनाम स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड और अन्य (2010) 10 SCC 744' के प्रकरण में निर्णय के कंडिका 68 में:

"68. सामान्यतः, हम इन सिद्धांतों के अनुपालन या अन्यथा को मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में वर्गीकृत कर सकते हैं। प्रथम, जहाँ नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का प्रयोग विशिष्ट विधान द्वारा वर्जित है; द्वितीय, जहाँ विधि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के प्रावधानों के कड़ाई से अनुपालन की परिकल्पना करता है और उनके अनुपालन में चूक के परिणामस्वरूप न केवल आदेश बल्कि अपचारी के विरुद्ध की गई कार्यवाही भी दूषित हो सकती है; और तृतीय, जहाँ विधि इन नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुपालन की अपेक्षा करता है, लेकिन सक्षम न्यायालय या अधिकरण द्वारा यह अनिवार्य निष्कर्ष निकाला जाता है कि अपचारी को कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पहुँचा है और गैर-अनुपालन निदेशात्मक प्रकृति की कार्रवाई के संबंध में है। प्रकरण इनमें से किसी भी श्रेणी में आ सकते हैं और इसलिए, न्यायालय को ऐसे प्रकरण के संबंध में लागू अधिनियम या नियमों और विनियमों के आलोक में प्रत्येक प्रकरण के तथ्यों की जांच करनी होगी। यह न केवल कठिन है बल्कि उचित भी नहीं है कि कोई ऐसा 'अनम्य सूत्र' बताया जाए जिसे बिना किसी परिवर्तन के सार्वभौमिक रूप से सभी मामलों में लागू किया जा सके।"

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

आगे कंडिका 79, 83, 85, 86 और 89 में उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

> **"79.** विधि की एक पूर्ण प्रतिपादनाओं के रूप में यह कहना कठिन है कि सभी मामलों में, सभी चरणों में और सभी घटनाओं में नोटिस और सुनवाई का अधिकार नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की एक अनिवार्य आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, यह कि उनका अनुपालन न करने का परिणाम हमेशा उन मौलिक आवश्यकताओं का उल्लंघन होगा जो संपूर्ण कार्यवाही को दूषित करती हैं। विभिन्न कानूनों ने विभिन्न चरणों में, विशेष रूप से न्यायालय में, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के

अपवर्जन का प्रावधान किया है। जहाँ कहीं भी ऐसा अपवर्जन व्यापक जनहित पर आधारित है और अनिवार्य तथा वैध कारणों से है, न्यायालयों ने ऐसी चुनौती को स्वीकार करने से इनकार कर दिया है। यह हमेशा कार्यवाही की प्रकृति, ऐसे विधि के आह्वान के आधारों और ऊपर बताए गए सिद्धांतों के आलोक में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुपालन की आवश्यकता पर निर्भर करेगा।"

83. धारा 26(1) के प्रावधान स्पष्ट रूप से आवश्यक विवक्षा द्वारा, कम से कम प्रारंभिक चरणों में, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अपवर्जन का संकेत देते हैं। ऐसे मामलों में जहाँ किसी उद्यम, उद्यमों के संघ, व्यक्ति या व्यक्तियों के संघ या किसी अन्य कानूनी इकाई का आचरण ऐसा है कि इससे जनहित को गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पहुँचता है और अधिनियम के प्रावधान का भी उल्लंघन होता है वहाँ आयोग विनियमन 31(2) के संदर्भ में बहुत कम समय के भीतर निर्णयोत्तर सुनवाई प्रदान करते हुए, अधिनियम की धारा 33 के संदर्भ में तुरंत एकपक्षीय अंतरिम व्यादेश आदेश पारित करने की अपनी अधिकारिता के भीतर होगा। यह निश्चित रूप से नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के पर्याप्त अनुपालन से अधिक होगा।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

85. जहाँ कहीं भी इस न्यायालय ने नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन की शिकायत से संबंधित मामलों पर विचार किया है, उसने हमेशा इस बात को ध्यान में रखा है कि ऐसे सिद्धांत किस सीमा तक लागू होने चाहिए। इसलिए, इनका लागू होना विधि के तहत प्राधिकारी द्वारा किए जाने वाले कर्तव्य की प्रकृति पर निर्भर करेगा। इस संबंध में निर्णय, वास्तव में, उन प्रतिद्वंद्वी तर्कों का रामबाण है जो किसी दिए गए प्रकरण में पक्षकारों द्वारा उठाए जा सकते हैं। इस

न्यायालय के 'केनरा बैंक बनाम देबाशीष दास' के निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है।"

86. हम यह भी देख सकते हैं कि प्राधिकारी या निकाय पर आरोपित कर्तव्य के दायरे और किए जाने वाले कार्य की प्रकृति को अनावश्यक निर्देशों या बाधाओं को थोपकर निष्प्रभावी नहीं बनाया जा सकता है, जो स्वयं धारा की स्पष्ट भाषा में परिकल्पित नहीं हैं। "नैसर्गिक न्याय" एक ऐसा शब्द है, जिसके लागू विधि के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, प्रकरण के तथ्यों के आधार पर अलग-अलग अर्थ और आयाम हो सकते हैं। यह कोई संहिताकृत अवधारणा नहीं है, बल्कि न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित सुस्पष्ट सिद्धांत हैं। प्रत्येक अर्द्ध-न्यायिक आदेश के लिए संबंधित प्राधिकारी को इन सिद्धांतों के अनुरूप कार्य करने के साथ-साथ यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता होगी कि निर्दिष्ट विधायी उद्देश्य प्राप्त किया जाए। शक्ति का प्रयोग निष्पक्ष और मनमानेपन से मुक्त होना चाहिए।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

89. 'ऑडी अल्टरम पार्टम' के सिद्धांत के अपवाद हमारे देश के दीवानी या आपराधिक न्यायशास्त्र के लिए अनभिज्ञ नहीं हैं, जहाँ सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा एकपक्षीय व्यादेश आदेश पारित किए जा सकते हैं, जबकि दांडिक अधिकारिता का प्रयोग करने वाले न्यायालय अभियुक्त की अनुपस्थिति में अपराध का संज्ञान ले सकते हैं और उसकी उपस्थिति के लिए सम्मन जारी कर सकते हैं। इतना ही नहीं, न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत अभियुक्त की अनुपस्थिति में शिकायत के मामलों में आरोप-पूर्व साक्ष्य भी दर्ज करते हैं। इसी तरह का दृष्टिकोण विभिन्न देशों में अलग-अलग प्रणालियों के तहत अपनाया जाता है।"

(बल दिया गया)

15. 'कृष्ण स्वामी बनाम भारत संघ, (1992) 4 SCC 605' के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय की एक संविधान पीठ को जांचात्मक और नियामक शक्ति तथा उस शक्ति का प्रयोग करते समय प्रशासनिक एजेंसियों द्वारा किए गए कर्तव्य की प्रकृति पर विचार करने का अवसर मिला था। जांचात्मक अभिव्यक्ति की व्याख्या करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रशासनिक एजेंसियों को दी गई जांच शक्ति सामान्यतः प्रकृति में जांचात्मक होती है। ऐसी जांच के क्रम की जांच वैधानिक शक्तियों के संदर्भ में की जानी चाहिए। कृष्ण स्वामी (पूर्वोक्त) के उक्त निर्णय के कंडिका 61 में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> **"61.** इस समस्या को एक अलग दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। सामान्य बोलचाल में, एक आपराधिक प्रकरण में, 'अन्वेषण' का अर्थ आरोप-पत्र दायर करने से पहले साक्ष्यों की खोज और संग्रह करना है और उसी के आधार पर निश्चित आरोप विरचित किए जाते हैं। जब विचारण शुरू होता है, तो मजिस्ट्रेट द्वारा की जाने वाली 'जांच' रुक जाती है। विचारण एक अभियुक्त को दोषसिद्ध या दोषमुक्त करने की पराकाष्ठा वाली प्रक्रिया है। सेवा विधि शास्त्र में, एक अपचारी कर्मचारी के विरुद्ध विभागीय जांच,शास्ति आरोपित करने के लिए समान लक्षण धारण करती है। अन्वेषण के चरण में अभियुक्त या आरोपित अधिकारी का प्रकरण में कोई दखल नहीं होता है और न ही वह किसी अवसर का हकदार होता है। अनुशासनिक प्राधिकारी या जांच अधिकारी, यदि नियुक्त किया गया हो, यह पाने पर कि साक्ष्य अपचारी अधिकारी के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए 'प्रथम दृष्ट्या' आधार प्रकट करते हैं, तो जांच संचालित की जाएगी। दांडिक

न्यायालय, अन्वेषण के अभिलेख जिस पर विश्वास किया गया है की आपूर्ति करने के बाद आरोप विरचित करता है। इसी प्रकार, अनुशासनिक प्राधिकारी/जांच अधिकारी निश्चित आरोप या आरोप विरचित करेगा और उन्हें उनके समर्थन में उन तथ्यों के विवरण के साथ संप्रेषित करेगा जिन पर भरोसा किया जाना है, और अपचारी अधिकारी को अपना स्पष्टीकरण या प्रतिरक्षा का लिखित कथन आदि प्रस्तुत करने के लिए बुलाएगा। विचारण/जांच के समय, व्यक्ति स्वयं के बचाव के लिए उचित अवसर का हकदार होता है।"

(बल दिया गया)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

16. 'भारत संघ बनाम डब्ल्यू.एन. चड्ढा, 1993 सप्लीमेंट्री (4) SCC 260' के प्रकरण में, कंडिका 88 और 89 में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है:

"88. पूर्वोक्त निर्णयों से जो विधि का सिद्धांत निकाला जा सकता है, वह यह है कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह तथ्य कि एक निर्णय—चाहे प्रथम दृष्ट्या मामला बना हो या न बना हो—अपने आप में सुनवाई के अपवर्जन का निर्धारक नहीं है, लेकिन यह विचार कि निर्णय पूरी तरह से एक प्रशासनिक निर्णय था और उसके बाद एक पूर्ण जांच होती है, यह तय करने में एक सुसंगत और वास्तव में एक महत्वपूर्ण कारक है कि क्या उस चरण में सुनवाई होनी चाहिए थी जिसे विधि ने स्पष्ट रूप से प्रदान नहीं किया था।

89. पूर्वोक्त सिद्धांत को लागू करते हुए, यह माना जा सकता है कि जब अन्वेषण अधिकारी यह अभिनिश्चित करने के लिए सामग्री एकत्र करने के अलावा कोई निर्णय नहीं ले रहा है कि प्रथम दृष्ट्या मामला बनता है या नहीं, और धारा 173(2) के तहत प्रतिवेदन दाखिल करने के प्रकरण में प्रतिवेदन दाखिल करने के अनुसरण में न्यायालय या अधिकरण के समक्ष विचारण में पूर्ण जांच होती है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि उस चरण में 'ऑडी अल्टरम पार्टम' का नियम पूर्व सूचना जारी करने और अभियुक्त को सुनने का दायित्व अध्यारोपित करता है जिसे विधि स्पष्ट रूप से मान्यता नहीं देता है। प्रश्न यह नहीं है कि क्या 'ऑडी अल्टरम पार्टम' निहित है, बल्कि यह है कि क्या इसके उपयोग किये जाने का अवसर विद्यमान है भी या नहीं।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

17. 'महाराष्ट्र राज्य बनाम ईश्वर प्राजी कलपत्री, (1996) 1 SCC 542' में कंडिका 15 और 16 में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है:

"15. हमारी राय में, उच्च न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त प्रावधान का पूर्णतः गलत अर्थ निकाला गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपचारी अधिकारी द्वारा एक संतोषजनक स्पष्टीकरण दिया जाना आवश्यक था। लेकिन यह अवसर केवल विचारण के दौरान ही दिया जाना है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन दर्ज होने से पहले साक्ष्य एकत्र किए जाने थे और प्रथम दृष्ट्या यह राय बनाई जानी थी कि अधिनियम की धारा 5(1)(ई) के प्रावधान आकर्षित होते हैं। सामग्री एकत्र करने के दौरान, ऐसा होता है कि संबंधित अधिकारी या अन्य व्यक्ति से पूछताछ की जा सकती है या अन्य प्रश्न पूछे जा सकते हैं। इस प्रथम दृष्ट्या राय के गठन के लिए कि एक अधिकारी आपराधिक कदाचार का

दोषी हो सकता है जिसके कारण प्रथम सूचना प्रतिवेदन दर्ज की जाती है, विधि में या अन्यथा ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो उस व्यक्ति को सुनवाई का अवसर देना अनिवार्य बनाता हो जिसके विरुद्ध प्रतिवेदन दर्ज की जानी है। यह कि ऐसा संतोषजनक विवरण न्यायालय के समक्ष दिया जाना था, इस न्यायालय के 'वीरास्वामी' प्रकरण के निर्णय से भी पुष्ट होता है, जहाँ उक्त निर्णय के पृष्ठ 713 पर अधिनियम की धारा 5(1)(ई) का उल्लेख करते हुए निम्नानुसार अवलोकन किया गया था:

'खंड (ई) एक सांविधिक अपराध सृजित करता है जिसे अभियोजन द्वारा सिद्ध किया जाना चाहिए। यह अभियोजन को सिद्ध करना है कि अभियुक्त या उसकी ओर से कोई व्यक्ति, उसकी आय के ज्ञात स्रोतों के असमानुपातिक वित्तीय संसाधनों या संपत्ति के आधिपत्य में रहा है। जब अभियोजन द्वारा उस भार का निर्वहन कर दिया जाता है, तो यह अभियुक्त को उसके आधिपत्य वाली संपत्तियों की असमानुपातिकता का संतोषजनक विवरण देना होता है। यह धारा सांविधिक प्रतिरक्षा उपलब्ध कराती है जिसे अभियुक्त द्वारा सिद्ध किया जाना चाहिए। यह एक निर्बंधित प्रतिरक्षा है जो अभियुक्त को आय से अधिक संपत्ति की असमानुपातिकता का विवरण देने के लिए प्रदान की गई है। लेकिन अभियुक्त पर डाला गया प्रमाण का विधिक भार अभियोजन के भार जितना भारी नहीं है। यद्यपि यह केवल अभियोजन के पक्ष पर कुछ संदेह पैदा करना मात्र नहीं है। विधायिका ने जानबूझकर "संतोषजनक विवरण" अभिव्यक्ति का उपयोग किया है। जोर "संतोषजनक" शब्द पर होना चाहिए। इसका अर्थ है कि अभियुक्त को न्यायालय को संतुष्ट करना होगा कि उसका

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

स्पष्टीकरण स्वीकार किए जाने योग्य है। अभियुक्त पर डाला गया प्रमाण का भार एक साक्ष्य संबंधी भार है, यद्यपि यह अनुनय भार नहीं है। यद्यपि अभियुक्त प्रमाण के उस भार का निर्वहन "संभाव्यताओं के संतुलन" पर या तो अभियोजन के साक्ष्य से और/या बचाव के साक्ष्य से कर सकता है।'

(बल दिया गया)

16. पूर्वोक्त उद्धरण में किसी भी प्रकार के संदेह की गुंजाइश नहीं है कि अधिनियम की धारा 5(1)(ई) के तहत अपचारी अधिकारी को अपनी संपत्ति और संसाधनों के बारे में संतोषजनक स्पष्टीकरण देने का जो अवसर प्रदान किया जाना है, वह विचारण शुरू होने पर न्यायालय के समक्ष है, न कि किसी पूर्ववर्ती चरण में। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा निकाला गया यह निष्कर्ष कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया था, क्योंकि मामला दर्ज करने से पहले कोई अवसर नहीं दिया गया था, स्पष्ट रूप से अनुचित है और 'के. वीरा स्वामी' प्रकरण में इस न्यायालय की पूर्वोक्त टिप्पणियों के विपरीत है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

18. उच्चतम न्यायालय द्वारा ऊपर उद्धृत निर्णयों में जो प्रतिपादित किया गया है, उससे इस संबंध में विधि का सारांश यह निकाला जा सकता है कि यह आवश्यक नहीं है कि सभी मामलों में, सभी चरणों में और सभी स्थितियों में नोटिस और सुनवाई का अधिकार नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की एक अनिवार्य आवश्यकता हो। यह भी समान रूप से स्थापित है कि आचरण को स्पष्ट करने और खातों के रख रखाव के साथ-साथ किसी भी अन्य प्रकृति के कर्तव्यों के निर्वहन में चूक/कमी के बारे में 'प्रथम दृष्ट्या' राय बनाते समय, जिससे प्रथम सूचना प्रतिवेदन दर्ज हो सकती है, प्राधिकारी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह सुनवाई का अवसर प्रदान करे या साक्ष्यों के प्रति-परीक्षण की अनुमति दे, मानो

लोकपाल किसी दीवानी वाद का विचारण कर रहा हो। वह उद्देश्य जिसके साथ अधिनियम, 2005 अधिनियमित किया गया है, दूरदराज के ग्रामीण इलाकों में रहने वाली निर्धन जनता को आजीविका प्रदान करने का एक पवित्र उद्देश्य प्रतीत होता है और संबंधित कार्यान्वयन एजेंसी द्वारा उक्त अधिनियम की आत्मा और मूल भावना का गला घोंटने के किसी भी प्रयास से कड़ाई और तत्काल निपटा जाना चाहिए। इसलिए, अधिनियम के उद्देश्य और अधिनियम की धारा 27(1) के तहत केंद्र सरकार द्वारा जारी नियमों/निर्देशों की योजना को ध्यान में रखते हुए, यह नहीं कहा जा सकता कि साक्ष्यों के प्रति-परीक्षण हेतु सुनवाई का अवसर प्रदान करने में विफलता नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है।

19. वास्तव में, विनियमन क्रमांक 11 स्पष्ट रूप से यह प्रावधान करता है कि लोकपाल साक्ष्य के किसी भी विधिक नियमों से बाध्य नहीं होगा और ऐसी प्रक्रिया का पालन कर सकता है जो उसे निष्पक्ष और उचित प्रतीत हो। विनियमन 13 पुनः अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए उचित अवसर प्रदान करने के बारे में कहता है और लोकपाल पर एक 'सकारण पंचाट' पारित करने का दायित्व डालता है। इस प्रकार, विनियमन के प्रावधान अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए उचित अवसर प्रदान करने और निष्पक्ष एवं उचित प्रक्रिया का पालन करने के रूप में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुपालन का प्रावधान करते हैं।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

20. 'लोकपाल' ने याचिकाकर्ता को नोटिस जारी किया है और उनके कथन दर्ज किए हैं, इसलिए लोकपाल द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया को किसी भी तरह से अनुचित नहीं कहा जा सकता है। विशेष रूप से तब, जब याचिकाकर्ता के साथ-साथ रोजगार सहायिका और पंचायत सचिव ने स्वयं अपने बयानों में मजदूरी पर्ची जारी करने, मस्टर रोल बनाए रखने आदि में विभिन्न विसंगतियों, अनियमितताओं और कमियों को स्वीकार किया है। ये स्वीकारोक्ति अपने आप में याचिकाकर्ता के इस प्रकरण को ध्वस्त कर देती है कि सुनवाई का उचित अवसर प्रदान नहीं किया गया था। अन्यथा भी, लोकपाल द्वारा पारित आदेश से यह प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता ने

कारण बताओ नोटिस का कोई जवाब प्रस्तुत नहीं किया है और स्वयं कोई जवाब प्रस्तुत न करके सुनवाई के अपने अधिकार का परित्याग कर दिया है। यह नहीं बताया गया है कि लोकपाल द्वारा उन ग्रामीणों के प्रति-परीक्षण का अवसर न देने से याचिकाकर्ता पर क्या प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, जिनके बयान दर्ज किए गए थे। लोकपाल के समक्ष जांच के दौरान याचिकाकर्ता द्वारा ग्रामीणों/शिकायतकर्ताओं के प्रति-परीक्षण का अवसर प्रदान करने के लिए कोई आवेदन या कोई मौखिक प्रार्थना नहीं की गई थी।

21. 'के.एल. त्रिपाठी बनाम स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य, AIR 1984 SC 273' के प्रकरण में कंडिका 32 और 33 में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है:

> **32.** मूल अवधारणा प्रशासनिक, न्यायिक या अर्द्ध-न्यायिक कार्यवाही में 'निष्पक्षता' की है। कार्यवाही में निष्पक्षता की अवधारणा पक्षकारों के बीच के विशेष विवाद , यदि कोई हो, पर निर्भर करती है। यदि किसी व्यक्ति की विश्वसनीयता, जिसने साक्ष्य दिया है या कुछ जानकारी दी है, संदेह में है, या यदि उस व्यक्ति का संस्करण या कथन विवाद में है, तो प्रति-परीक्षण का अधिकार अनिवार्य रूप से कार्यवाही में निष्पक्षता का हिस्सा होना चाहिए। लेकिन जहाँ तथ्यों के संबंध में कोई विवाद नहीं है, बल्कि केवल परिस्थितियों के स्पष्टीकरण का प्रश्न है, वहाँ निष्पक्षता को न्यायोचित ठहराने के लिए प्रति-परीक्षण की कोई आवश्यकता नहीं है। जब तथ्यों के प्रश्न पर कोई विवाद नहीं था, तो आदेश से व्यथित पक्ष को कोई वास्तविक क्षति/प्रतिकूल प्रभाव नहीं पहुँचा है; प्रति-परीक्षण के किसी औपचारिक अवसर का अभाव अपने आप में निष्पक्ष रूप से लिए गए निर्णय को अमान्य या दूषित नहीं करता है। यह तब और भी स्पष्ट हो जाता है जब वह पक्ष, जिसके विरुद्ध आदेश पारित किया गया है, तथ्यों पर विवाद नहीं करता है और

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

विवरण की सत्यता या कथन की विश्वसनीयता की जांच करने की मांग नहीं करता है।"

33. जो पक्षकार अपनी पीठ पीछे एकत्र किए गए साक्ष्य या गवाही की सत्यता का खंडन नहीं करना चाहता, वह बाद में इस मांग में सफल होने की अपेक्षा नहीं कर सकता कि प्रति-परीक्षण का कोई अवसर नहीं मिला था, विशेष रूप से तब जब इसकी मांग नहीं की गई थी और बयानों की सत्यता के बारे में कोई विवाद नहीं था। जहाँ तथ्यों के संबंध में, या विवादित तथ्यों को दिए जाने वाले महत्व के संबंध में कोई विवाद नहीं है, बल्कि केवल कृत्यों का स्पष्टीकरण है, ऐसे मामलों में प्रति-परीक्षण के अवसर का अभाव कोई प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न नहीं करता है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

22. 'के.एल. त्रिपाठी' (पूर्वोक्त) के प्रकरण में उक्त अनुपात को लागू करते हुए, और जब यह ध्यान में रखा जाता है कि याचिकाकर्ता ने कारण बताओ नोटिस का कोई जवाब प्रस्तुत नहीं किया है और ग्रामीणों/शिकायतकर्ताओं के प्रति-परीक्षण के लिए उनके द्वारा कोई प्रार्थना नहीं की गई है, और अन्यथा भी, इस न्यायालय ने पाया है कि जांच करते समय लोकपाल द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया निष्पक्ष और उचित थी और पक्षकारों को उचित अवसर प्रदान करने के बाद एक 'सकारण पंचाट' पारित किया गया है, तो केवल इसलिए कि याचिकाकर्ता को साक्ष्यों के प्रति-परीक्षण का कोई अवसर नहीं दिया गया था नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का कोई उल्लंघन नहीं है।

23. पूर्वोक्त कारणों से, इस न्यायालय को इस रिट याचिका में कोई सार नजर नहीं आता है, याचिका खारिज किए जाने योग्य है और एतद्द्वारा खारिज की जाती है।

सही /-

(पी.के. मिश्रा)

न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated By Smt. Vijaylaxmi Pradhan [Adv.]

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur